नीतिशास्त्र के आयाम (Dimensions of Ethics)

नीतिशास्त्र के आयाम का आशय उन पक्षों या क्षेत्रों से है जहां उचित अनुचित, शुभ-अशुभ, कर्तव्य-अकर्तव्य आदि की विवेचना, अर्थनिरूपण या मानवीय कर्मों एवं उनके मानदंडों का मूल्यांकन किया जाता है।

1. नियामक या आदर्शमूलक या मानकीय नीतिशास्त्र
2. अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र
3. अधि नीतिशास्त्र

नियामक विज्ञान (Normative Science)

नीतिशास्त्र एक आदर्शमूलक या नियामक विज्ञान है। नीतिशास्त्र एक विज्ञान है क्योंकि इसके अंतर्गत किसी क्षेत्र विशेष का सुव्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। इसमें मानव जीवन की नैतिक समस्याओं का व्यवस्थित, निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ ढंग से विवेचन का प्रयास किया जाता है।

नीतिशास्त्र एक आदर्शमूलक विज्ञान है। इसका मुख्य उद्देश्य मानव और उसके कर्मों का ज्यों का त्यों या तथ्यात्मक वर्णन करना नहीं है बल्कि इसके संबंध में आदर्शों, मानदंडों, नियमों या मानकों का युक्तिसंगत प्रतिपादन करना है तथा उन मानकों के आधार पर यह निर्धारित करना है कि-

1. हमारे कौन से कर्म उचित हैं या अनुचित हैं?
2. हमें क्या करना चाहिए और क्यों करना चाहिए?
3. हमारे जीवन का चरम लक्ष्य क्या है?

इस प्रकार एक आदर्शमूलक विज्ञान के रूप में नीतिशास्त्र मानव के नैतिक जीवन का मार्गदर्शन करता है।

संक्षेप में मानकीय नीतिशास्त्र के अंतर्गत-

1. सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सामान्य मानव के ऐच्छिक कर्मों के उचित या अनुचित का निर्धारण होता है।
2. उचित या अनुचित के निर्धारण के मानकों या मानदंडों की स्थापना एवं उनका युक्तिसंगत विवेचन।
3. मानव जीवन के चरम लक्ष्य या अंतिम साध्य की संभावना पर विचार तथा उसकी प्राप्ति की संभावना की विवेचना।
4. मानव के संकल्प स्वतंत्र एवं नैतिक उत्तरदायित्व का विवेचन ताकि निर्धारित किया जा सके कि व्यक्ति किस सीमा तक अपने कार्यों के लिए नैतिक दृष्टिकोण से उत्तरदायी है।

इसके अंतर्गत निम्नलिखित सिद्धांत आ जाते हैं।

1. **परिणामवाद/प्रयोजनवाद** : जब मानवीय क्रियाकलापों की उचित या अनुचित के रूप में निर्धारण उस कर्म से उत्पन्न परिणाम के आधार पर किया जाए तो फिर उसे परिणामवादी नीतिशास्त्र कहा जाता है। सुखवाद, उपयोगितावाद आदि परिणामवादी नैतिक सिद्धांत है।
2. **परिणाम निरपेक्ष नीतिशास्त्र/निष्प्रयोजनवाद:** जब किसी कर्म के उचित या अनुचित होने का निर्धारण उसके परिणाम के आधार पर न होकर अन्तःकरण मूल्यों या अन्तर्निहित मूल्यों या नियमों के आधार पर किया जाए तो फिर वहां परिणाम निरपेक्ष नीतिशास्त्र की स्थिति उभरती है। 'कांट' इसके प्रबल समर्थक है।

   'कांट' - कर्त्तव्य, कर्त्तव्य के लिए' (कर्त्तव्यवाद) की बात करते है कांट ने कर्त्तव्य, कर्त्तव्य के लिए की अवधारणा का प्रतिपादन किया है। इसके अनुसार हमें परिणाम या अन्य बाह्य आदेश के स्थान पर कर्त्तव्यों को कर्त्तव्य समझकर सम्पादित करना चाहिए। परिणाम से उसके औचित्य का निर्धारण नहीं होता।

3. **सद्गुण नीतिशास्त्र** (Virture ethics) सुकरात, प्लेटो एवं अरस्तु के दर्शन में सदगुण नीतिशास्त्र की स्थिति दिखाई देती है। सुकरात के अनुसार सदगुण ही ज्ञान है। जबकि प्लेटो के दर्शन में चार प्रकार के कार्डिनल (मुख्य सदगुण) माने गये हैं। अरस्तू के अनुसार मध्यम मार्ग के अनुसरण का अभ्यास सद्गुण है। जैसे- साहस, उदण्डता एवं भय का मध्यम मार्ग है। सद्गुण नीतिशास्त्र के अनुसार सद्गुण से युक्त व्यक्ति जो कर्म करेगा या निर्णय लेगा वह उचित होगा। इस रूप में यह परिणाम की बजाए चरित्र पर बल देता है। सुकरात, प्लेटो, अरस्तू आदि इसइका समर्थन करते है।
4. **रोल एथिक्स:** कन्फ्यूसियस के नैतिक विचारों को रोल एथिक्स कहा जाता है। इसके अंतर्गत यह माना गया है कि नैतिकता परिवार एवं समुदायिक संबंधों के माध्यम से उत्पन्न होती है।
5. **पोस्ट माडर्न एथिक्स:** नैतिकता की इस अवधारणा में किसी भी नैतिक सिद्धांत या मत को सार्वभौम या अपरिवर्तनशील एवं निरपेक्ष नहीं माना जाता।
6. **आत्मपूर्णतावाद:** आत्मपूर्णतावाद का यह मानना है कि भावना, इच्छा एवं इंद्रियमय जीवन का नियंत्रण एवं निर्देशन, बुद्धिमय-विवेकमय जीवन से होना चाहिए, अर्थात् मनुष्य की हीन प्रकृति पर उच्च प्रकृति का नियंत्रण आवश्यक है। जब इच्छाओं और वासनाओं पर बुद्धि का नियंत्रण होता है तब व्यक्तिगत हित और सामाजिक हित में कोई विरोध उत्पन्न नहीं होता। ऐसी स्थिति में ही मानव व्यक्तित्व की पूर्णता सिद्ध होती है। सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, हीगल, ग्रीन, ब्रेडले आदि इसके समर्थक है।

अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र (Applied Ethics)

मानवीय नीतिशास्त्र में ऐसे मानकों या मानदंडों की विवेचना की जाती है जिनके आधार पर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कर्मों का मूल्यांकन किया जा सके। जब इन मानदंडों के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में आदर्शों की विवेचना कर समस्या का समाधान किया जाता है तो फिर वह अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र कहलाता है। अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र में हम किसी तात्कालिक महत्व की व्यवहारिक समस्या का नैतिक समाधान ढूंढने का प्रयास करते हैं। यहां नैतिक समाधान का आशय 'क्या होना चाहिए' और 'क्या नहीं होना चाहिए' से है। इसका संबंध हमारे दैनिक जीवन की घटनाओं से है। इसके विभिन्न पक्ष है-

1. प्रशासकीय नीतिशास्त्र *(Administrative Ethics)*
2. पर्यावरणीय नीतिशास्त्र *(Enviormental Ethics)*
3. चिकित्सीय नीतिशास्त्र *(Medical Ethics)*
4. व्यापारिक नीतिशास्त्र *(Business Ethics)*
5. मीडिया नीतिशास्त्र *(Media Ethics)* आदि।

इन विभिन्न पक्षों में दो बातें महत्वपूर्ण हैं-

1. कौन से गुण आवश्यक हैं।
2. क्या किया जाना चाहिए।

व्यावहारिक समस्या :

बायो एथिक्स (Bio ethics)	जीओ एथिक्स (Geo ethics)
पब्लिक सैक्टर एथिक्स (Public Sector ethics)	कारपोरेट एथिक्स (Corporate ethics)
ऑनर किलिंग: गर्भपात नैतिक है या अनैतिक	लिंगभेद
भ्रूण हत्या	पर्यावरण की समस्या
नस्लभेद	आर्थिक समस्या
मानव अवैध व्यापार	शरणार्थी समस्या
इच्छा मृत्यु	क्लोनिंग

अधिनीतिशास्त्र (Meta-Ethics)

वर्तमान शताब्दी में नीतिशास्त्र की एक नई विधा के रूप में 'अधिनीतिशास्त्र' का उद्‌भव एवं विकास हुआ है। चूंकि इसमें मानकीय नीतिशास्त्र द्वारा स्थापित एवं स्वीकृत नैतिक निर्णयों तथा नैतिक सिद्धांतों का तटस्थ होकर विश्लेषणात्मक, आलोचनात्मक अध्ययन एवं स्पष्टीकरण होता है, इसीलिए इसे 'विश्लेषणात्मक नीतिशास्त्र' अथवा 'आलोचनात्मक नीतिशास्त्र' की भी संज्ञा दी जाती है। इस रूप में अधिनीतिशास्त्र मानकीय नीतिशास्त्र का पूरक कहा जाता है।

अधिनीतिशास्त्र का मुख्य उद्देश्य नैतिक सिद्धांतों, आदर्शों या मानकों की स्थापना करना नहीं है अपितु नैतिक निर्णयों के स्वरूप तथा अर्थ का विश्लेषण करना और ऐसी विधियों की खोज करना है जिनके द्वारा इन नैतिक निर्णयों के औचित्य-अनौचित्य का निश्चय किया जा सके। अधिनीतिशास्त्र के अंतर्गत शुभ, उचित, कर्तव्य आदि नैतिक शब्दों के वास्तविक अर्थ पर विचार किया जाता है। किसी नैतिक सिद्धांत का विश्लेषण करते समय अधिनीतिशास्त्री पूर्णत: तटस्थ रहता है क्योंकि उसका कार्य केवल आलोचनात्मक विश्लेषण करना ही होता है, उस सिद्धांत का समर्थन अथवा खंडन करना नहीं। विभिन्न नैतिक सिद्धांतों के संबंध में तटस्थता अधिनीतिशास्त्र की प्रमुख विशेषता है जो उसे आदर्शमूलक नीतिशास्त्र से अलग करती है।

संक्षेप में अधिनीतिशास्त्र की दो मुख्य समस्याएं है-

1. नैतिक शब्दों के अर्थ एवं नैतिक निर्णयों के स्वरूप का स्पष्टीकरण करना एवं विश्लेषण।
2. उन युक्तियों अथवा तर्कों की निष्पक्ष परीक्षा करना जो नैतिक निर्णयों के औचित्य-अनौचित्य का निश्चय करने के लिए प्रस्तुत किये जाते हैं।

भ्रूण हत्या (Female Forticide)

भ्रूण हत्या लैंगिक अन्याय का प्रथम पक्ष एवं पारिवारिक हिंसा का गुप्त रूप है। यह भारत की एक प्रमुख सामाजिक समस्या है।

क्या है?: परीक्षण के माध्यम से यह जानकर कि भ्रूण स्त्रीपरक है, उस भ्रूण को गर्भाशय में ही नष्ट कर उसका स्खलन करा देना भ्रूण हत्या है।

भ्रूण हत्या के निम्नलिखित मुख्य कारण है-

सामाजिक कारण:

1. वंश परंपरा बढ़ाने की जिम्मेदारी पुत्र पर।
2. पुत्रप्राप्ति पर सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि का भाव।
3. पुत्रप्राप्ति पर सामाजिक सुरक्षा का भाव।
4. पिता के मृत्यु होने पर मुखाग्नि देने की जिम्मेदारी पुत्र पर।
5. ऐसा विश्वास कि पुरुष ही परिवार का भरण-पोषण कर सकता है।
6. महिलाओं के विरुद्ध समाज में होने वाली हिंसा का भय।

आर्थिक कारण:

1. दहेज प्रथा का बढ़ता प्रचलन।
2. पराया धन मानने की प्रवृत्ति।
3. सामान्यत: घरेलू कार्य मूल्यविहिन।

तकनीकी कारण:

1. आसानी से भ्रूण की पहचान कर सुरक्षित रूप से भ्रूण हत्या।

भ्रूण हत्या का दुष्परिणाम

- लिंगानुपात असंतुलित जिसके दुष्परिणाम सामने आ रही है। 2011 की जनगणना के अनुसार यह अनुपात 940 है।
- छेड़छाड़, अपहरण, महिलाओं की खरीद-फरोख्त, यौन उत्पीड़न, वेश्यावृत्ति आदि सामाजिक बुराईयों को बढ़ावा।
- सामाजिक विकास में बाधा, सामाजिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न।

भ्रूण हत्या के नैतिक पक्ष

- गर्भपात से महिला विशेष को खतरा।
- मानवीय मूल्यों का पतन।
- मानव का संवेदनात्मक पक्ष कमजोर हो जाता है।
- सबसे मूलभूत अधिकार 'जीवन का अधिकार' है, यहाँ उसका उल्लंघन होता है।
- एक निर्दोष प्राणी को उसके जीवन से वंचित करना अनैतिक कार्य है।
- भ्रूण हत्या एक विशेष लिंग के प्रति किया गया अन्याय है, इस रूप से यह समानता के आदर्श के विपरीत है।
- कांट मतानुसार यह प्रत्येक मनुष्य साध्य है। यहां उसका उल्लंघन किया जाता है।

कब भ्रूण परीक्षण जायज

यदि उद्देश्य और प्रयोजन ठीक हो तो-

- अनेक बीमारियाँ (मधुमेह, पारकिंसन आदि) ऐसी है जिनकी पहचान गर्भावस्था में संभव है और जीन थेरापी द्वारा उसका उपचार किया जा सकता है।
- जेनेटिक शोध एवं अध्ययन के कर्म में।
- शिशु को खतरे से बचाने के लिए।

कब भ्रूण हत्या जायज

- यदि गर्भवती महिला का जीवन खतरे में हो (आयरलैंड के सविता हलप्पनवार केस का उल्लेख)
- बलात्कार के संदर्भ में (सापेक्ष स्थिति को ध्यान में रखना होगा)

भ्रूण हत्या को रोकने या निदान का उपाय

- सामाजिक सोच में परिवर्तन लाना होगा।
- महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण बदलना होगा।
- सामाजीकरण की प्रक्रिया को मानवीय एवं मूल्यात्मक बनाना होगा।
- गोद लेने की समुचित व्यवस्था की जाय।
- तकनीक के दुरूपयोग को प्रभावी तरीके से रोका जाय।
- स्त्री-पुरुष समानता को बढ़ा देने वाले दार्शनिक विचारों को बढ़ावा दिया जाय जैसे- शंकराचार्य।
- स्त्री को आर्थिक दृष्टिकोण से सशक्त बनाया जाय ताकि उन्हें बोझ के बजाय वरदान मानने की प्रवृत्ति बढ़े।
- विभिन्न क्षेत्रों में सुप्रतिष्ठित, बेहतरीन प्रदर्शन कर परिवार, समाज एवं देश का नाम रौशन करने वाली महिलाओं जैसे- साइना नेहवाल, पी.वी. सिन्धु, दुत्तीचंद, मैरी कॉम, गीता फोगाट, इंदिरा नूयी, कल्पना चावला आदि के बारे में संदेश प्रसारित किया जाये।
- सुधारात्मक एवं निवारक दंड प्रक्रिया का सहारा लिया जाना चाहिए।
- सरकार के द्वारा किये गये प्रयास जैसे- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, सुकन्या समृद्धि योजना, प्रधानमंत्री मातृत्व वंदना योजना आदि भ्रूण हत्या को रोकने और लिंगानुपात की समस्या के निदान में सहायक है।

PCPNDT एक्ट (अधिनियम, 1994)

प्री-कॉन्सेप्शनल एंड प्री-नटाल डायग्नोस्टिक टेक्नीक्स एक्ट, 1994 (लिंग चयन निषेध अधिनियम)।

क्यों लाया गया?

- कन्या भ्रूण हत्या पर रोक लगाने हेतु,
- लिंगानुपात में सुधार लाने हेतु,

- समाज में व्याप्त लैंगिक असमानता को दूर करने,
- कन्याओं को समाज में उचित स्थान दिलाने तथा जागरूकता लाने,
- ऐसी नीतियों को निर्माण करना ताकि उन्हें समाज और राष्ट्र में पुरूष के समकक्ष अधिकार मिल सके।

पीसीपीएनडीटी अधिनियम, 1994 बनाया गया था जिसे बाद में 2003 में संशोधित किया गया।

- गर्भावस्था के दौरान डायग्नोटिस्क केवल पंजीकृत क्लीनिकों एवं प्रयोगशालाओं में ही किया जायेगा।
- इस दौरान गर्भ के लिंग को बताना कानूनी अपराध माना जायेगा।
- इसमें लिंग निर्धारण को बताने वाले क्लीनिक या प्रयोगशालाओं के डॉक्टरों को जुर्म साबित होने पर तीन साल कैद एवं दस हजार रूपये तक का जुर्माने का प्रावधान किया गया है।
- **अगस्त, 2013 : हाल ही में लिंग अनुपात एवं भ्रूण हत्या पर गठित सेंट्रल सुपरवाइजरी बोर्ड (सीएसबी) की बैठक में नये प्रावधानों को पीसीपीएनडीटी एक्ट में जोड़ा गया है।**
- पीसी एंड पीएनडीटी एक्ट में यह भी प्रावधान किया गया है कि अल्ट्रासाउंड मशीनों को पंजीकृत किये बगैर बेचने वालों के खिलाफ कार्रवाई की जायेगी। ऐसा करने से अब इन मशीनों की गैर-कानूनी बिक्री पर रोक लगेगी। इसमें पहली बार बिना पंजीकरण मशीनों को बेचने वालों खिलाफ कार्रवाई का फैसला दिया गया है। इससे पहले सिर्फ ऐसे उपकरण खरीदने वालों पर ही कार्रवाई का प्रावधान था।
- सभी राज्य सरकारों को कहा गया है कि हर एक अल्ट्रासाउंड मशीन का रिकॉर्ड रखा जाये तथा अल्ट्रासाउंड मशीन बेचने वाले कंपनियों से हर तीन महीनों में ऑडिट का प्रावधान किया गया है।
- सीएसबी ने कानूनों को लागू करवाने के लिए 'कोड ऑफ कन्डक्ट' भी तैयार किया है। लिंगानुपात 2001 में जहां 933 था वह 2011 की जनगणना में बढ़ कर 940 हो गया है।

कहाँ समर्थन

स्वीडन: गर्भपात महिला का व्यक्तिगत अधिकार।

2011 की जनगणना में सबसे निम्न स्तर पर लिंग अनुपात: पिछले 20 सालों से लड़के-लड़कियों के अनुपात में लगातार गिरावट आ रही है। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार 0-6 वर्ष आयु के बच्चों में प्रति हजार लड़कों के बीच 945 लड़कियां थी। 2001 के जनगणना में यह अनुपात घटकर 927 हो गया था। 2011 की जनगणना में खुलासा हुआ है कि लड़कियों का यह अनुपात और भी घटकर 914 तक आ गया है।

मृत्युदंड (Capital Punishment)

क्या है?: किसी व्यक्ति द्वारा किये गये गंभीर अपराध के लिए कृत्रिम उपायों से उसके प्राणों का हरण कर लेना ही मृत्युदंड है।
विपक्ष में तर्क: गांधी, मानववादी, सुधारवादी, अस्तित्ववादी आदि।

1. मृत्युदंड अपने-आप में अनैतिक है। जीवन का आधारभूत मूल्य 'जीवन जीना' है। मृत्युदंड इस पर प्रहार करता है। अत: राज्य और समाज को इस आधारभूत मूल्य का उल्लंघन करने का आधार नहीं है।
2. न्यायाधीश भी मनुष्य होता है। उससे भी भूल की गुंजाइश होती है। ऐसी स्थिति में मृत्युदंड देने पर न्याय की संभावना सदा के लिए समाप्त हो जाती है।
3. मृत्युदंड देने पर अपराधी के सुधार की संभावना सदा के लिए समाप्त (गांधी)
4. मृत्युदंड व्यक्ति को पश्चाताप एवं आत्मग्लानि का अवसर नहीं देता।
5. मृत्युदंड बदले की भावना पर आधारित है। यह वर्तमान सभ्य समाज के प्रतिकूल है।
6. यदि राज्य दे नहीं सकता तो उसे जीवन लेने का भी अधिकार नहीं है।

7. मृत्युदंड मानवता विरोधी है। इससे जनमानस में भय का संचार होता है।

8. मृत्युदंड प्राप्त व्यक्ति के परिवार को मानसिक प्रताड़ना के दौर से गुजरना पड़ता है।

9. ऐसा भी कहना भी सही नहीं है कि मृत्युदंड की व्यवस्था हटाने पर अपराध बढ़ जायेंगे। डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन आदि में मृत्युदंड की व्यवस्था नहीं है परंतु वहां अपराध की दरे कम है दूसरी ओर भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि में मृत्युदंड की व्यवस्था है फिर भी अपराध की दर अधिक है।

पक्ष में तर्क:

1. मृत्युदंड देकर अपराधी को पुनः क्रूर एवं घृणित अपराध करने से सदा के लिए रोक देता है।

2. मृत्युदंड अन्य व्यक्तियों की दुष्प्रवृत्तियों पर रोक लगाता है इससे वे वैसे अपराधों को करने से डरते हैं। (दंड संबंधी निवारक सिद्धांत)

3. मृत्युदंड की व्यवस्था न होने पर समाज में अपराधों में और वृद्धि हो सकती है। इससे सामाजिक सुरक्षा एवं शांति को खतरा होता है।

4. यह कहना कि मृत्युदंड की व्यवस्था न होने पर भी अपराध कम हो सकते हैं। ऐसा केवल वैसे ही देशों के संदर्भ में स्वीकार किया जा सकता है जहां जनता शिक्षित एवं जागरूक है। न्याय प्रणाली सक्रिय एवं पुलिस प्रशासन प्रभावी है। भारत जैसे देशों में जहां अपराधों में लगातार वृद्धि हो रही है। वहां एक निरोधात्मक उपाय के रूप में इसकी स्वीकृति दी जा सकती है।

5. अनेक मानवाधिकार संगठन मृत्युदंड का विरोध करते हैं। परंतु यहां प्रश्न है कि मानव के अधिकार की बात किसके संदर्भ में की जाय। मानव कहलाने का अधिकारी केवल वहीं व्यक्ति है जिसमें सह-अस्तित्व की भावना हो, कुछ मानवीय गुणों से युक्त हो। ऐसे व्यक्ति जिनके क्रियाकलाप मानवीयता पर प्रश्नचिह्न लगाते हो, अन्य मानवों के अस्तित्व में बाधक हो। उन्हें मानवता के हित रक्षा में ही मृत्युदंड दिया जा सकता है।

सामान्यत मृत्युदंड नहीं दिया जाना चाहिए लेकिन 'दुर्लभ से दुर्लभतम (Rarest of rare)' मामलों में मृत्युदंड का समर्थन किया जा सकता है। ऐसे क्रूर और घृणित अपराध जिनसे जनमानस उद्वेलित एवं व्यथित होता है, सामाजिक ताने-बाने को तोड़ता हो, भय, हिंसा एवं आतंक के माध्यम से राष्ट्र की एकता और अखण्डता के लिए खतरा उत्पन्न करता हो वहाँ मृत्युदंड की स्वीकृति दी जा सकती है।

यदि मृत्युदंड में देरी हो तो फिर उसे आजीवन कारावास में परिवर्तित किया जा सकता है।

सरोगेसी (Surrogacy)

सामाजिक-सांस्कृतिक विवाद का नया पहलू

क्या है?: सरोगेसी का शाब्दिक अर्थ है- 'किसी और को अपने काम के लिए नियुक्त करना' संतान उत्पत्ति के इस नये विकल्प को सहायक प्रजनन तकनीक (Assisted Reproductive Technology) के एक रूप इन विट्रो फर्टिलाइजेशन (IVF) के द्वारा क्रियान्वित किया जाता है।

सरोगेसी वस्तुतः वह प्रक्रिया है जिसमें वैसी महिला जो किन्हीं कारणों से संतान सुख से वंचित है, बच्चे को जन्म देने में असमर्थ है, के अण्डाणु को पुरुष के शुक्राणु के साथ कृत्रिम तरीके से निषेचित कराकर उस भ्रूण को अन्य महिला की कोख में डाल दिया जाता है। जो महिला बच्चे को पेट में पालती है और जन्म देती है उसे 'सरोगेट मदर' कहा जाता है। जिसके अंडाणु-शुक्राणु होते हैं वे जैविकीय माता-पिता कहलाते हैं। इसमें 'सरोगेट मदर' के आनुवांशिक तत्वों का प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि जन्म लेने वाले बच्चे का रंग, लंबाई, प्रकृति, आनुवंशिक गुण आदि सभी आनुवंशिक माता-पिता के होते हैं।

सरोगेसी का कारण एवं संभावनाएं

सरोगेसी के बढ़ते प्रचलन का एक कारण गरीबी है। भारत में सरोगेसी को कानूनी मान्यता प्राप्त है। ऐसी स्थिति में आर्थिक रूप से संपन्न परंतु किन्हीं कारणों से संतान सुख से वंचित लोग 'सरोगेट मदर' की मदद से दाम्पत्य सुख का लाभ लेने में सक्षम हो जाते हैं। इसके लिए सरोगेट मदर को एक निश्चित राशि का भुगतान किया जाता है।

भारत में सरोगेसी द्वारा बच्चे प्राप्त करने की संकल्पना का तेजी विस्तार हो रहा है। भारतीयों के साथ-साथ विदेशियों को भी यहां सरोगेट मदर आसानी से मिल जाती है। अब इसे पर्यटन से भी जोड़कर देखने की बात कहीं जा रही है। यहां संतान के इच्छुक पैरेन्ट्स को टूर ऑपरेटर पूरा पैकेज ऑफर करते हैं जिसमें सरोगेट मदर के साथ-साथ नर्सिंग-होम्स के साथ उनका संपर्क बना रहता है।

वाणिज्यिक उपयोगः परहितकारी दृष्टिकोण (दोस्त, घर के सदस्य)

विवाद का विषय

1. सरोगेट मदर बच्चे पैदा करने के बाद भावनाओं के आवेश में आकर बच्चे को उनके कानूनी माता-पिता को देने से इंकार कर देती है।
2. जब सरोगेट मदर से पैदा बच्चा विकलांग हो या जुड़वा हो तो फिर वैसी स्थिति में आनुवंशिक माता-पिता उसे अपनाने से इंकार करने लगते हैं।
3. भ्रूण का लिंग परीक्षण के पश्चात् सरोगेट मदर के माध्यम से बच्चा पैदा करने का प्रयास।
4. गरीब परिवार की महिलाओं पर सरोगेट मदर बनकर अतिरिक्त पैसा कमाने के उद्देश्य से दबाव भी डाला जा सकता है। ऐसी स्थिति में उनके शोषण को बढ़ावा मिल सकता है।
5. सरोगेट मदर की प्रसव पश्चात् देखभाल की जिम्मेदारी।

सरोगेसी का नैतिक पक्ष

- निःसंतान को मातृत्व एवं पितृत्व सुख की प्राप्ति।
- माता-पिता को भावनात्मक सम्बल।
- वैयक्तिक स्वतंत्रता के अधिकार के अनुरूप है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार है।
- सरोगेट मदर को आर्थिक लाभ
- आत्म संतुष्टि एवं परार्थ कि भावना संतोष की प्राप्ति।

सरोगेसी का विपक्ष

- गरीब महिलाओं के शोषण की संभावना।
- सरोगेट मदर के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव की संभावना।
- सरोगेट मदर के भावनात्मक पक्षों जैसे- प्रेम, दया, अपनत्व आदि पर प्रहार क्योंकि सरोगेट मदर एवं बच्चे के बीच का भावनात्मक संबंध टूट जाता है।
- बच्चे के जीवन और भविष्य को लेकर कठिनाई।

भारत में सरोगेसी कानून

भारत में सरोगेसी से संबंधी विवाद को प्रभावी तरीके से निपटारे हेतु बनाया गया कानून असिस्टेड रीप्रोडक्टिव टैक्नोलॉजीज (रेगुलेशन) बिल 2010 है। इस विधेयक के अनुसार 21 से 35 वर्ष आयु तक की महिला ही सरोगेट मदर बन सकती है। इस अधिनियम में विदेशियों द्वारा सरोगेसी लिए जाने से संबंधित शर्तों का भी उल्लेख है। इसमें एक महिला द्वारा अधिकतम तीन बार ही सरोगेट मदर बनने की सीमा निर्धारित की गई है। परंतु यदि उसे पहले से दो संतान हैं तब केवल एक बार ही सरोगेट मदर बन सकती है। इस दौरान लिंग परीक्षण को भी पूरी तरह से प्रतिबंधित किया गया है।

भारत में सरोगेसी इसलिए भी आसान है क्योंकि हमारे यहां अधिक कानून नहीं है। यद्यपि भारत में वाणिज्यिक सरोगेसी को विधिक मान्यता प्राप्त है परंतु आज भी इस व्यवस्था का नियमन विधिवत ढंग से नहीं हो पाता है।

भारत में सरोगेसी के नियम निम्नलिखित हैं-

- सरोगेसी से पैदा हुए बच्चे पर आनुवंशिक माता-पिता का हक होगा। गोद लेने वाले मामलों की तरह इसमें किसी घोषणा की जरूरत नहीं होती।
- बच्चे के जन्म प्रमाण पत्र में केवल आनुवंशिक माता-पिता का ही नाम होना चाहिए।
- सरोगेसी कॉण्ट्रेक्ट में सरोगेट मदर के जीवन बीमा का उल्लेख निश्चित रूप से किया जाना चाहिए।
- यदि सरोगेट बच्चे की डिलीवरी से पहले आनुवंशिक माता-पिता की मृत्यु हो जाती है या उनके बीच तलाक हो जाता है या उनमें कोई भी बच्चे लेने से मना कर देता है तो बच्चे के लिए आर्थिक सहयोग की व्यवस्था की जाए।

सरोगेसी के संबंध में विधि आयोग ने भी अपनी 228वीं रिपोर्ट में कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें की हैं। सरोगेसी से संबंधित समझौते में सरोगेट मदर के जीवन की व्यवस्था अनिवार्य रूप से होनी चाहिए। इसके साथ ही प्रेग्नेन्सी के दौरान लिंग जांच पर पूरी तरह प्रतिबंध होना चाहिए। सरोगेसी की पूरी व्यवस्था सभी सम्मिलित पक्षों के मध्य हुए समझौते से भी संचालित होनी चाहिए। इस समझौते में सभी शर्तों का उल्लेख हो परंतु इसका उपयोग वाणिज्यिक न हो।

वैश्विक परिदृश्य

सरोगेसी का प्रचलन विदेशों से प्रारंभ हुआ परंतु भारत जैसे विकासशील देशों में यह अवधारणा तेजी से प्रसारित हो रही है। जहां यूरोपीय देशों में यद्यपि सरोगेसी मान्य है परंतु वहां इस संदर्भ में कड़े कानून है। जापान में यह आज प्रतिबंधित है। भारत में इस संदर्भ में विशेष सतर्कता की आवश्यकता है क्योंकि यह-

- महिलाओं के शोषण का साधन बन सकता है। महिलाओं को पैसे का लालच देकर उन्हें बारंबार इस कार्य के लिए प्रेरित किया जा सकता है।
- उन्हें आय के स्रोत के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।
- इससे बाजारीकरण को बढ़ावा मिल सकता है।
- इससे लिंग परीक्षण का चलन बढ़ सकता है।
- इससे मानवीय मूल्यों पर भी प्रहार हो सकता है।
- अभी देश में नि:संतान दंपत्तियों को संतान सुख देने वाले एआरटी क्लीनिकों (असिस्टेड रीप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजीज क्लीनिक) पर निगरानी के लिए कोई तंत्र नहीं है।
- 15 जुलाई, 2019 को सरोगेसी रेगुलेशन बिल को लोकसभा में पारित किया गया है। इसके निम्नलिखित प्रावधान हैं-
  - इस विधेयक द्वारा सरोगेसी को कानूनी मान्यता प्रदान की गयी और व्यावसायिक सरोगेसी को गैर कानूनी/प्रतिबंधित कर दिया गया।
  - भारत में केवल भारतीय नागरिक ही सरोगेसी करा सकते हैं। विदेशी, NRIs, Trans Gender, एकल परिवार, समलैंगिक, Live-in में रहने वाले Couple के लिए सरोगेसी गैर-कानूनी/प्रतिबंधित है।
  - केवल 5 वर्ष पूर्व विवाहित नि:सन्तान को सरोगेसी को अनुमति, जहाँ पति या पत्नी में कोई एक Infertile हो, वहाँ एक बार ही केवल सरोगेसी को अनुमति है।
  - जैविकीय माता-पिता की उम्र क्रमश: 23-50 वर्ष और 26-55 वर्ष हो।
  - सरोगेट माँ केवल निकटतम रिश्तेदार होंगे जिनका पहले से एक सन्तान होना जरूरी और उनको केवल 1 बार सरोगेसी की अनुमति होगी।
  - सरोगेसी पर निगरानी रखने हेतु केन्द्रीय व राज्य स्तर पर बोर्ड का प्रावधान।
  - सरोगेट माता के बीमा का प्रावधान।

क्लीनिकल ट्रॉयल (Clinical Trial)

स्वास्थ्य संबंधी किसी विशेष समस्या का समाधान या रोगों का इलाज तलाशने के लिए मनुष्यों पर किये जाने वाले प्रयोग, शोध या अनुसंधान को चिकित्सीय परीक्षण (Clinical Trial) कहा जाता है। नयी दवाओं का विकास एवं निर्माण एक जटिल एवं खर्चीली प्रक्रिया है। इससे संबंधित दिशा-निर्देश भी हैं परंतु भारत में नई दवाओं का परीक्षण सस्ता है। परिणाम स्वरूप भारत में यह एक क्लीनिकल ट्रॉयल एक उद्योग का सकल ले रहा है। चूंकि क्लीनिकल ट्रॉयल खर्चीला है और इसमें जान जाने का भी खतरा होता है ऐसी स्थिति में दवा कम्पनियाँ चिकित्सीय परीक्षण की अनुमति लिये बिना अस्पताल एवं डॉक्टरों से सांठ-गांठ करके धोखे से परीक्षण करती हैं।

नैतिक मुद्दे

- लोगों के जीवन से खिलवाड़।
- नैतिकता विहीन व्यापार।
- कमजोर कानून एवं लोगों की जागरूकता के अभाव के कारण घरेलू एवं बहुराष्ट्रीय दवा कम्पनियाँ भारत को क्लीनिकल ट्रॉयल का केन्द्र बना रही हैं।
- दवा परीक्षण के कारण शारीरिक विकलांगता एवं मौत की भी खबरे आ रही हैं।

भारत में स्थिति

- भारत में किसी भी दवा परीक्षण की शुरूआत करने के पहले ड्रग्स कंट्रोलर ऑफ इंडिया तथा संबंधित इथिक्स कमेटी से अनुमति आवश्यक होती है।
- परीक्षण के समय क्षति या मौत के मुआवजे का प्रावधान।
- परीक्षण के दौरान क्षति पहुंचने या मारे जाने वाले व्यक्ति को सही इलाज या मुआवजा मिलना सुनिश्चित करने के लिए इथिक्स कमेटी, प्रयोजक और जांचकर्ताओं की जिम्मेदारियों में वृद्धि।
- परीक्षण किए जाने वाले व्यक्ति की सहमति हासिल करने वाले प्रपत्र में उसकी सामाजिक-आर्थिक हैसियत बताने वाले अन्य प्रावधान जोड़े गए हैं।

शरणार्थी समस्या (Refugee problem)

किसी राष्ट्र के लोग जो युद्ध की स्थिति में प्रजातीय हिंसा, अकाल, बाढ़, महामारी, भूखमरी से तंग आकर पड़ोसी राष्ट्र या अन्य राष्ट्रों में पलायन कर जाते हैं, शरणार्थी कहलाते हैं।

शरणार्थी एवं अवैध घुसपैठ में अंतर किया जाता है। यदि किसी देश के लोग बेहतर जीवन के लिए पड़ोसी देश या अन्य देशों में गैर-कानूनी रूप से प्रवेश करते हैं तो सामान्य भाषा में इसे अवैध घुसपैठिया कहा जाता है।

इस प्रकार, किसी देश के लोगों को शरणार्थी तभी कहा जाएगा जब वह पीड़ित या विवश होकर अन्य देशों में शरण लेता है।

साम्प्रदायिकता (Communalism)

धर्म में निष्ठा एवं धार्मिक व्यवस्था का अनुपालन सांप्रदायिकता नहीं है, वस्तुतः यह एक राजनीति अभिमुख अवधारणा है जो केवल धार्मिक समुदाय को स्वीकार करती है। यह धार्मिकता या धर्म की राजनीतिक इच्छा-पूर्ति में रूपान्तरित स्थिति है।

धर्म के मूलभूत नैतिक मूल्यों, मान्यताओं एवं विश्वासों को समसामयिक राजनीतिक सुविधाओं की आवश्यकताओं के अनुसार तोड़-मरोड़कर विकृत रूप से पेश करना ही साम्प्रदायिकता है। इसमें एक धार्मिक समुदाय का अन्य धार्मिक समुदाय से विद्वेष, प्रतिस्पर्धा और दुश्मनी पैदा की जाती है, ताकि वह अन्य समुदायों को अपने शत्रु के रूप में समझने लगे।

स्पष्ट है कि जहाँ धर्मनिरपेक्षता राजनीति से धर्म को पृथक करने को इंगित करती है, वहीं साम्प्रदायिकता राजनीतिक हितपूर्ति के संदर्भ में धर्माधारित होकर आगे बढ़ती है। यह सामाजिक-सांस्कृतिक, सहअस्तित्व के मानक के रूप में स्थापित धर्मनिरपेक्षता के स्वरूप का विरोध करती है।

लिंग भेद (Gender Discrimination)

शब्दिक अर्थ

लिंग-भेद का शाब्दिक अर्थ है- लिंग आधारित भेद-भाव या असमानता। चूंकि भेद-भाव सामान्यत: महिलाओं के साथ होता है, अत: यहाँ लिंग-भेद का आशय लिंग के आधार पर महिलाओं के साथ किए जाने वाले भेद से है। कुछ अपवादात्मक स्थितियों को छोड़कर मानव समाज दो लिंगों में विभाजित हैं- (1) पुरुष और (2) स्त्री।

हेरॉल्ड लॉस्की के अनुसार- समानता का आशय विशेषाधिकारों का अभाव तथा सभी व्यक्तियों के विकास हेतु पर्याप्त समान अवसर की प्राप्ति है। ऐसी स्थिति में यदि पुरूषों व स्त्रियों के विकास हेतु समान अवसर की उपलब्धता न हो तथा पुरूषों को विशेषाधिकार प्राप्त हो तो फिर उसे लिंग-भेद कहा जा सकता है।

संदर्भ

लिंग-भेद की अवधारणा को समझने के लिए यौन (Sex) व लिंग (Gender) के अंतर को समझना आवश्यक है। यौन का आशय पुरूष व नारी के मध्य के जैव वैज्ञानिक अंतर/प्राकृतिक अंतर से है। स्पष्टत: यौन एक जैविक (Biological) अवधारणा है। दूसरी ओर लिंग पुरूष व नारी के मध्य के इस मौलिक विभेद से जुड़े अनेक सामाजिक व सांस्कृतिक अर्थों एवं संदर्भो को इंगित करता है।

दूसरे शब्दों में स्त्री का एक विशेष प्रकार की जैविक संरचना के साथ जन्म लेना एक प्राकृतिक चीज है जिस पर उसका कोई वश नहीं है। लेकिन लिंग प्राकृतिक नहीं है बल्कि यह एक सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक रूप से गढ़ी हुई चीज है जो बदल सकती है और बदलती भी रही है। अगर लिंग प्राकृतिक होता तो फिर स्त्री व पुरुष की स्थिति सर्वत्र, हमेशा एक जैसी होती। लेकिन साक्ष्य यह बताते हैं कि विभिन्न समाजों में यह सम्बन्ध विभिन्न प्रकार का है तथा विभिन्न कालों में यह संबंध बदलता भी रहा है।

स्पष्टत: लिंग-भेद का तात्पर्य जैविकीय या शारीरिक भेद से नहीं है बल्कि स्त्री व पुरूप के मध्य सामाजिक संदर्भों में कृत्रिम विभेद से है। चूंकि यह भेद कृत्रिम है अत: इसे दूर किया जा सकता है। यहाँ लिंग-भेद को दूर करने का आशय यह है कि स्त्री व पुरूष दोनों को मनुष्य के रूप में समान अवसर, अधिकार, गौरव व गरिमा दी जाए।

दूर करना आवश्यक क्यों

1. **नैतिक दृष्टिकोण :** सभी व्यक्तियों को यह नैतिक अधिकार है कि उन्हें भी अन्यों के सामान अपने विकास का समान अवसर मिले। स्त्रियों को यह अवसर लैंगिक समानता के बिना प्राप्त नहीं हो सकता है।
2. **सामाजिक दृष्टिकोण :** समाज के सर्वांगीण विकास एवं सामाजिक समरसता के लिए यह आवश्यक है कि समाज के सभी लोग समाज हित व राष्ट्रहित में योगदान दें। इसके लिए आवश्यक है कि लिंग आधारित भेद समाप्त हो और महिलाओं को भी पुरूषों के समान अधिकार, अवसर व गरिमा मिले।
3. **राजनैतिक दृष्टिकोण :** स्वतंत्रता, समानता व न्याय रूपी आदर्श की प्राप्ति तभी सार्थक रूप से हो सकती है जब सामाजिक राजनैतिक व्यवस्था में लिंग-समानता हो।
4. **गाँधी जी :** सर्वोदय की अवधारणा को सफल बनाने के लिए लिंग-विभेद को समाप्त करना आवश्यक है।

लिंग-भेद के आयाम या क्षेत्र

लैंगिक विभेद कुछ मातृप्रधान समाजों को छोड़कर लगभग सम्पूर्ण विश्व में विद्यमान रही है। इसीलिए लैंगिक विभेद का अर्थ ही महिलाओं की निम्नतर या हीनतर स्थिति से लगाया जाता है। यह निम्नतर स्थिति या उसके प्रति नकारात्मक सोच जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में देखी जा सकती है।

पारिवारिक एवं सामाजिक क्षेत्र :

1. जन्म के पूर्व से विभेद (भ्रूण परीक्षण एवं भ्रूण हत्या): यह लैंगिक अन्याय का घृणित रूप है 2. पालन-पोषण में विभेद 3. स्त्री की व्यक्तिगत पहचान नहीं 4. विवाह के बाद स्थिति में परिवर्तन (टाइटल परिवर्तन, सिंदूर लगाना, मंगलसूत्र पहनना) 5. परिवार का एक अभिन्न अंग न मानकर पराए धन के रूप में देखना।

भाषायी संदर्भ में : 1. सभी अच्छे / उच्च पदों का पुल्लिंग में होना (राष्ट्रपति, सभापति)
2. सभी गालियां / अपशब्द महिलाओं से संबंधित

आर्थिक क्षेत्र में : 1. समान कार्य के लिए महिलाओं को कम व पुरूषों को ज्यादा वेतन
2. सार्वजनिक क्षेत्रों में पुरूषों की भूमिका प्रधान
3. घरेलू कार्यों में महिलाओं की संलग्नता, इन्हें अनुत्पादक मानना।
4. अर्थव्यवस्था के संचालक के रूप में पुरूषों की प्रधान भूमिका।

राजनीतिक क्षेत्र : 1. सत्ता का संचालन पुरूषों द्वारा
2. नीति-निर्धारण में महिलाओं की भूमिका कम
3. संसद में महिलाओं की भूमिका कम।

धार्मिक क्षेत्र : 1. धार्मिक पंथों व संगठनों के प्रधान प्रायः पुरूष
2. विभिन्न धर्मों में पुरूषों के अपेक्षा महिलाओं को कम अधिकार
3. कुछ मंदिरों में महिलाओं के प्रवेश पर पाबंदी।

नारीवाद एवं विभिन्न नारीवादी सिद्धान्त

विभिन्न प्रकार के नारी मुक्ति आंदोलन के लिए नारीवाद शब्द का प्रयोग होता है। यद्यपि विभिन्न नारीवादियों में लिंग विभेद के कारण एवं निदान के संदर्भ में मतभेद है, फिर भी सभी नारीवादी यह मानते हैं कि समाज में महिलाओं की पुरूषों से हीन स्थिति है। इस हीन स्थिति का आधार लिंग है। इस विभेदीकरण को स्त्री व पुरूष के मध्य प्राकृतिक विभेदों के आधार पर न्यायोचित ठहराया जाता है। परंतु नारीवादियों का यह मानना है कि वास्तव में महिलाओं के साथ विषमता या विभेद सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक शक्ति संरचनाओं पर निर्भर है। इसका दोनों यौनों के बीच जैव वैज्ञानिक संबंधों या भेदों से कोई लेना-देना नहीं है।

नारीवाद एक ऐसी अवधारणा है जो यह मानती है कि समाज में महिलाओं की निम्नत्तर स्थिति का कारण लिंग (Gender) है। इस निम्नत्तर/हीनत्तर स्थिति को जैविक निर्धारणवादी स्त्री और पुरुष के मध्य के प्राकृतिक आधार पर न्यायोचित ठहराते हैं लेकिन नारीवाद का यह मानना है कि वास्तव में यह विभेद सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक शक्ति संरचना पर निर्भर है जिसका दोनों यौनों (Sex) के बीच के जैव वैज्ञानिक विभेद से कोई लेना-देना नहीं है। दूसरे शब्दों में नारीवादियों के अनुसार ***जैविक विभेद के आधार पर लिंग-भेद संबंधी नैतिक निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।***

उदाहरणस्वरूप : "जैविक रूप से महिला-पुरुष में अंतर है।" यह एक तथ्यात्मक कथन है। परन्तु इस आधार पर तर्कतः यह निगमित नहीं किया जा सकता है कि "सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में महिला-पुरुष में अंतर होना चाहिए।" (मूल्यात्मक कथन)।

अतः नारीवादी पुरुषों के समान नारी की प्रतिष्ठा, अधिकार, अवसर, आदर व गरिमा की बात करते हैं।

'Gender' और 'Sex' के मध्य अन्तर को दिखाना नारीवादियों का एक प्रमुख उद्देश्य है। उल्लेखनीय है कि जैविक निर्धारणवादी (Biological Determinist) पुरुष और महिला के मध्य इस विभेद को ही आधार मानकर इस विभेद का विस्तार सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर तक कर देते हैं जबकि नारीवादी इसका विरोध करते हुए कहते हैं कि जैविकीय विभेद से सामाजिक-सांस्कृतिक विभेद अलग है।

इस प्रकार नारीवादी नारी के अधिकारों को मानवाधिकारों की सामान्य श्रेणी में मान्यता देने, स्त्री को सामाजिक न्याय दिलाने, उसे परम्परागत पराधीनता से मुक्ति प्रदान करने, स्त्री-पुरूष समानता को स्वीकार करने, स्त्रियों की क्षमता, साहस और योग्यता को पहचानने तथा 'स्त्री' को 'मानव' के रूप में पहचान का समर्थन करने वाला एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। यह नारी के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में भी परिवर्तन लाने का भी प्रयास करता है।

नारीवादी आंदोलन महिला उत्पीड़न के विभिन्न पहलुओं को समझने और उनका निदान करने की दिशा में एक निरंतर परिवर्तनशील विचारधारा है। नारीवादी दृष्टिकोण से संबंधित विभिन्न आंदोलनों में एक बात समान है कि सभी ने अपना ध्यान वर्तमान स्त्री-पुरुष संबंधों को बदलने पर केन्द्रित किया हुआ है। दूसरे शब्दों में नारीवाद से संबंधित विभिन्न विचारधाराएँ इस बात से पैदा होती हैं कि न्याय के लिए महिला को भी स्वतंत्रता और समानता दी जानी आवश्यक है परन्तु इस स्वतंत्रता और समानता का क्या स्वरूप होगा, इनके कौन-कौन से कार्य होंगे- इस मुद्दे पर इनमें मतैक्य का अभाव है। परिणामस्वरूप नारीवादी आंदोलन से संबंधित कई मत उभरकर सामने आते हैं।

नारीवादी आन्दोलन की विभिन्न धाराओं में कुछ मुद्दों पर गहन विवेचन एवं स्पष्टीकरण हुआ है।

नारीवादी विचार के मुख्य मुद्दे

- पितृतंत्र
- निजी/सार्वजनिक भेद
- सेक्स-जेंडर विवाद।

पितृतंत्र या पितृसत्ता (Patriarchy)

'पितृतंत्र' या 'पितृसत्ता' का शाब्दिक अर्थ है- पिता का शासन। व्यापक स्तर पर पितृसत्ता का अर्थ है- परिवार या समाज में पुरुष की प्रधानता, प्रभुत्व व सर्वोच्चता की अभिव्यक्ति एवं संस्थापीकरण। इस शक्ति का लाभ पुरुष वर्ग सभी महत्वपूर्ण संस्थाओं और निर्णयों पर कब्जा करके और नारीवर्ग को इस शक्ति से वंचित करके उठाता है। इस प्रकार यहाँ पितृसत्ता को सामाजिक संरचना और क्रियाओं की एक ऐसी व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें पुरुषों का स्त्रियों पर वर्चस्व रहता है। यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था विवाह तथा परिवार द्वारा सुदृढ़ की जाती है। यह पितृसत्ता शब्द नारीवादी विश्लेषण के केन्द्र में है।

केट मिलेट (Kete Millett) ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'Sexual Politics' में पितृसत्ता को एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था माना है जो पुरुष आधिपत्य, प्रधानता और नारी की अधीनता एवं शोषण को महत्व देता है। पुरुष ने अपने आधिपत्य का प्रयोग दो रूपों में किया है- (1) सामाजिक सत्ता और (2) आर्थिक सत्ता द्वारा। यहाँ पितृसत्तात्मक व्यवस्था में इस बात पर जोर है कि स्त्री के ऊपर पुरुष का आधिपत्य कोई व्यक्तिगत घटनाचक्र नहीं है, बल्कि वह तो एक संरचना का भाग है।

गेरडा लरनर के अनुसार- परिवार में नारियों तथा बच्चों पर पुरुष आधिपत्य की स्वीकृति, अभिव्यक्ति तथा उनका संस्थाकरण और समाज में आमतौर पर नारियों पर पुरुष आधिपत्य या स्वामित्व का विस्तारीकरण ही पितृतंत्र है। इसमें पुरुष को नारी से उत्कृष्ट माना जाता है और उन्हें ही महत्वपूर्ण संस्थाओं में सत्ता-संचालन सौंपा जाता है। दूसरी ओर, यहाँ यह कहा जाता है कि नारी पुरुष की संपत्ति है और उसे पुरुष के नियंत्रण में ही रहना चाहिए।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था में परिवार में नारी पर दोहरा नियंत्रण रखा जाता है- (1) नारी की यौनता (Sexuality) पर नियंत्रण और (2) नारी की श्रमशक्ति पर नियंत्रण। इससे नारी उत्पादक संसाधनों की पहुंच एवं स्वामित्व से वंचित रह जाती है। परिणामस्वरूप वह पुरुष पर सम्पूर्ण रूप से निर्भर हो जाती है।

व्यक्तिगत ही राजनीति है (Personal is Politics)

उग्र नारीवाद का एक बहुचर्चित नारा है- व्यक्तिगत ही राजनीति है। जब एक समूह दूसरे समूह पर शासन करता है तब वह संबंध राजनैतिक हो जाता है और जब यह व्यवस्था लंबे समय तक चलती है तब वह विचारधारा में परिणत हो जाती है।

वस्तुत: यह नारा कि 'व्यक्तिगत ही राजनीति है', प्राइवेट (निजी) और पब्लिक (सार्वजनिक) के द्वि-विभाजन को दिखाता है जो कि राजनीतिक सिद्धान्त और व्यवहार में किया जाता रहा है। घरेलू उत्पीड़न, घरेलू हिंसा इत्यादि को व्यक्ति का निजी मामला (पारिवारिक मामला) बताकर राज्य को उसमें हस्तक्षेप से दूर किया जाता है। ऐसी स्थिति में परिवार में जनतंत्र की स्थापना नहीं हो पाती। बाहर (सार्वजनिक स्तर पर) जिस जनतंत्र को उचित और आवश्यक माना जाता है, परिवार के स्तर पर उसे ही अनुचित एवं गैर-आवश्यक रूप में स्थापित कर दिया जाता है। इससे स्त्रियों के शोषण को बढ़ावा मिलता है।

उग्र नारीवाद के अनुसार नारी के विरुद्ध घरेलू हिंसा, शिशु दुर्व्यवहार तथा बलात्कार जैसे व्यक्तिगत विषय सार्वजनिक क्षेत्र में अब आ गये हैं। इन मुद्दों पर राजनीतिक दबाव का अर्थ या नारीवादी दबाव का अर्थ यह मानता है कि परिवार के भीतर के 'निजी

क्षेत्र' में महिलाओं के प्रति विभिन्न प्रकार की हिंसा विद्यमान है। इस हिंसा के विरुद्ध वैसी ही कार्यवाही की जानी आवश्यक है जैसा कि सार्वजनिक क्षेत्र में हिंसा के साथ होती है। उग्र नारीवादियों के अनुसार, हमें सार्वजनिक जीवन में अपनाये जाने वाले मूल्यों को निजी जीवन में भी अपनाना होगा। जिन आधारों पर हम देश या समाज में जनतंत्र चाहते हैं उन्हीं आधारों पर हमें परिवार में भी जनतंत्र कायम करना होगा।

नारीवादी विचारधारा के विकास क्रम में तीन मुख्य सिद्धांत दिखाई देते हैं:-

1. उदारवादी नारीवाद (Liberal Feminism)
2. समाजवादी नारीवाद (Socialist Feminism)
3. उग्र नारीवादी (Radical Feminism)

उदारवारी नारीवाद जहाँ लिंग विभेदीकरण को समाजीकरण की उपज मानता है वही समाजवादी नारीवाद इसे वर्गीय संरचना पूँजीवादी व्यवस्था का परिणाम मानता है। उग्र-नारीवाद में पितृसत्तात्मक व्यवस्था को लैंगिक असमानता के मुख्य कारक के रूप में स्वीकार किया गया है। अत: जहाँ उदारवादी नारीवाद सामाजिक-राजनैतिक व्यवस्था में सुधार एवं पुरुषों को प्राप्त अधिकारों एवं विशेषाधिकारों को महिलाओं तक विस्तारित कर लैंगिक समानता की स्थापना की बात करता है वहीं समाजवादी नारीवाद एवं उग्र-नारीवाद संरचनात्मक एवं ढाँचागत परिवर्तन पर बल देते हैं। समाजवादी नारीवाद पूँजीवादी ढाँचे में बदलाव की बात करता है वहीं उग्र-नारीवाद पितृसत्तात्मक ढाँचे के उन्मूलन की बात करता है।

उदारवादी नारीवाद (Liberal Feminism)

उदारवादी नारीवाद उदारवादी दार्शनिक परम्पराओं का अनुकूलन करता है। उदारवाद का दर्शन व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सिद्धान्त पर आधारित था, जिसका आशय चयन की स्वतंत्रता, समान अवसर और नागरिक अधिकार आदि से था। उदारवादी नारीवाद का यह मानना है कि समानता, स्वतंत्रता और न्याय की अवधारणाएँ तब तक अपर्याप्त हैं जब तक कि इसमें लैंगिक आयाम को न जोड़ा जाए। उल्लेखनीय है कि प्रारम्भ में महिलाएँ, निम्न वर्ग और गुलाम राष्ट्रों के नागरिक इसके दायरे से बाहर थे। उदारवादी नारीवादियों ने एक ओर तो मानवीय गरिमा, स्वतंत्रता और समानता के जनतांत्रिक मूल्य जैसी उदारवादी धारणाओं को तो दूसरी ओर महिलाओं के जीवन की दयनीय स्थिति और उसकी अधीनता, के बीच के अंतर्विरोधों को प्रखरता के साथ प्रस्तुत किया। बेंथम और मिल जैसे उपयोगितावादी विचारक महिलाओं की स्वतंत्रता और महिलाओं के अधिकार का स्पष्ट समर्थन करते हैं। उनके अनुसार मानव जाति का यह आधा हिस्सा नैतिक तौर पर पुरुषों के समान है।

उदारवादी नारीवाद यह मानता है कि लैंगिक असमानता दोषपूर्ण समाजीकरण की उपज है। अत: इसके निदान हेतु वे सामाजिक सुधार, कानूनी सुधार, महिलाओं के लिए समान अवसरों की उपलब्धता, सामाजिक क्षेत्र में भागीदारी एवं मानव के तौर पर इनकी संभावनाओं को पूरा करने हेतु अवसर प्रदान करने के पक्षधर हैं।

समर्थक : मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट (1759-1797), हैरिएट टेलर मिल (1807-1858), जॉन स्टुअर्ट मिल (1806-1873)।

प्रारंभिक उदारवादी नारीवादी मेरी वोल्सटन क्राफ्ट (1759-97) अपनी पुस्तक *'A Vindication of the Rights of Women'* में महिला अधिकारों की जोरदार वकालत की है। 19वीं एवं 20वीं सदी के नारीवादी आंदोलन की बुनियादी रूपरेखा इस पुस्तक में दिखाई देती है। यहाँ इससे संबंधित निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय हैं -

(i) मानव जाति का सदस्य होने के कारण महिलाएँ भी तार्किक हैं। अत: वे भी पुरुषों की तरह सभी प्राकृतिक अधिकारों की हकदार हैं। महिलाओं की भी सार्वजनिक जीवन में सहभागिता हो।

(ii) स्त्रियों पर आरोपित पतिव्रतता, आज्ञाकारिता, मृदुता, लज्जाशीलता, कोमलता आदि के गुण सामाजिक अनुकूलन के कारण उत्पन्न होते हैं, इनका कोई प्राकृतिक या जैविक आधार नहीं है।

(iii) महिलाओं की आभासी हीनता (apparent inferiority) सदियों से महिलाओं की उपेक्षा का परिणाम है।

(iv) महिलाओं की पुरुषों पर आर्थिक-सामाजिक निर्भरता को समाप्त किया जाए। ऐसे कानून एवं नीतियाँ बनाई जाए जो महिलाओं को चयन की समानता एवं अवसर की समानता सुनिश्चित कर सके।

(v) पुरुषों के लिए हासिल अधिकारों एवं विशेषाधिकारों को महिलाओं तक विस्तारित किया जाए।

उपयोगितावाद के प्रबल समर्थक, व्यक्तिवाद एवं उदारवाद के अग्रणी विचारक मिल ने 1869 में प्रकाशित अपनी चर्चित पुस्तक "The Subjection of Women" में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार एवं अवसर देने का जोरदार समर्थन किया। उल्लेखनीय है कि मिल के समय इंग्लैण्ड में महिलाओं की दशा बड़ी दयनीय थी। उच्च शिक्षा पाने, संसद का सदस्य बनने तथा सार्वजनिक पदों पर कार्य करने का अधिकार नहीं था। यहाँ तक कि उन्हें मताधिकार भी प्राप्त नहीं था। महिलाएँ दूसरे दर्जे की नागरिक थीं। उनके साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता था।

मिल की यह पुस्तक केवल उन समकालीन संदर्भों तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि वर्तमान में भी महिलाओं की बेहतरी के लिए यह प्रासंगिक है। इसमें पहली बार स्त्री-असमानता को एक राजनैतिक समस्या के रूप में पेश किया गया और साथ ही इसके स्रोत एवं उपाय को बौद्धिक तरीकों से खोजने का प्रयास किया गया।

मिल ने सबसे पहले अपनी पुस्तक में महिलाओं की दासता और पराधीनता के पक्ष में दिए जाने वाले तर्कों को प्रस्तुत किया और फिर उन तर्कों का खंडन कर महिलाओं की समानता के पक्ष में तर्क प्रस्तुत किए। इस संबंध में चार मुख्य तर्क थे –

लैंगिक श्रेष्ठता के समर्थन में तर्क

पहला तर्क : चूँकि प्राचीन काल से ही पुरुष स्त्री का स्वामी होता आया है, इसलिए इसका कुछ न कुछ औचित्य अवश्य होगा। अतः स्त्रियों को अब भी पुरुषों की अधीनता में रहता चाहिए (ऐतिहासिक तर्क)।

मिल के अनुसार, यदि प्राचीन काल में कोई प्रथा या धारणा प्रचलित रही हो तो इसका आशय यह नहीं है कि वह न्यायसंगत ही होगा। अतः परम्परा या इतिहास के आधार पर स्त्री-पुरुष समानता का विरोध गलत है। उदाहरणस्वरूप, प्राचीन काल में प्रचलित दास प्रथा अब अमान्य है।

दूसरा तर्क : महिलाओं के स्वभाव एवं प्रकृति पर आधारित तर्क

ऐसा माना जाता है कि स्त्रियाँ पुरुषों की तुलना में प्राकृतिक दृष्टि से ही निम्न हैं। अतः यदि समाज में महिलाओं की हीन स्थिति है तो यह सर्वथा उपयुक्त है।

मिल के अनुसार, प्राकृतिक या जैविक भिन्नता के आधार पर लैंगिक विषमता को उचित मानना ठीक नहीं है। ***लैंगिक विषमता वस्तुतः सामाजिककरण का परिणाम है।*** स्त्री स्वभाव जैसी कोई प्राकृतिक चीज नहीं है। स्त्री स्वभाव कृत्रिम है। कुछ शारीरिक भेदों को छोड़कर स्त्री हीनता के संबंध में दिए गए सभी भेद कृत्रिम एवं वाह्य परिस्थितियों के परिणाम हैं। वे मौलिक एवं अनिवार्य नहीं हैं। मिल के अनुसार मनुष्य का स्वभाव, गुण सामाजिक वातावरण के अनुसार बदलता है। वोल्स्टन क्राफ्ट के समान मिल का भी मानना है कि स्त्रियाँ पुरुषों जितनी ही गुणी होती हैं और मौका मिलने पर उतनी ही प्रसिद्धि पा सकती हैं। उनकी ऐसी क्षमता का मूल्यांकन लंबी अवधि तक आजादी मिलने के बाद ही हो सकती है। मिल ने यूरोप की रानियों और भारत की राजकुमारियों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा है कि बहुत-सी महिलाओं ने राजनीतिक नेतृत्व की असाधारण क्षमता प्रदर्शित की है।

तीसरा तर्क : महिलाओं के स्वभाव पर आधारित तर्क

महिलाओं के अधीनीकरण में कोई दोष नहीं है, क्योंकि महिलाएँ स्वेच्छा से अधीनता को स्वीकार करती हैं।

मिल के अनुसार ऐसा कहना गलत है। महिलाएँ स्वेच्छा से नहीं बल्कि सामाजिक दबाव या विकल्पों के अभाव में पुरुष की अधीनता स्वीकार करती है। मिल के अनुसार महिलाओं का पालन-पोषण, शिक्षण करते समय ऐसे विचार उनके मस्तिष्क में भर दिए जाते हैं कि वे समर्पण भाव से युक्त, आत्मसंयमी, पुरुष की इच्छा का ध्यान और उनका अनुकरण करने लगती है।

चौथा तर्क : परिवार में निर्णय का कार्य पुरुष द्वारा

परिवार के सुव्यवस्थित रूप से संचालन के लिए निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। यह निर्णय का कार्य पति सबसे अच्छी तरह कर सकता है।

मिल के अनुसार यह तर्क हास्यास्पद है। मिल का कहना है कि पति और पत्नी दोनों वयस्क होते हैं, अतः निर्णय में दोनों की भागीदारी होती है। ऐसा मानने का कोई आधार नहीं है कि पति ही घर के सभी निर्णय ले।

स्त्रियों की पराधीनता से संबंधित चारों तर्कों का खंडन करके मिल अपनी पुस्तक में यह कहते हैं कि *''यहाँ ऐसे बहुत से लोग हैं जिनके लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है कि असमानता के पक्ष में कोई न्यायसंगत या वैध युक्ति नहीं है। उन्हें यह भी बताने की आवश्यकता है कि इसको हटा लेने से क्या सुनिश्चित लाभ प्राप्त होगा।''*

यहाँ मिल ने स्त्रियों को समान अधिकार दिए जाने के चार सामाजिक लाभ गिनाए हैं-

1. परिवार में तानाशाही का स्थान नहीं होगा। महिला को भी परिवार में समानता प्राप्त होगी। इससे लोकतांत्रिक भावना को मजबूती मिलेगी। समतावादी परिवारों में लोकतंत्रीय नागरिकों के सृजन होने पर ही राजनीतिक एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में लोकतंत्र का स्वरूप स्थिर हो सकेगा। पुनः परिवार में आधुनिकता एवं समानता लाकर मानवता का पुनर्जन्म हो सकता है।
2. जनसमुदाय की मानसिक क्षमताएँ दुगुनी हो जाएँगी। महिला सहकर्मियों से प्रतिद्वन्द्विता के कारण पुरुष भी अपने कार्यक्षेत्रों में कुशलता से काम करेंगे।
3. लिंग समानता का मानव समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। अधीनता की स्थिति में महिलाओं की इच्छा विकृत रूप से अभिव्यक्त होती है। समानता की प्राप्ति होने पर यह प्रवृत्ति दूर होगी।
4. महिलाओं को समानता देने से उनके सुख और आनन्द में वृद्धि होगी। मिल के अनुसार इससे उपयोगितावाद के 'अधिकतम व्यक्तियों का अधिकतम सुख' की प्राप्ति संबंधी सिद्धान्त की पूर्ति होगी।

मिल के अनुसार स्त्रियों की दासता केवल कानून से दूर नहीं होगी बल्कि इसके लिए शिक्षा, रोजगार के समान अवसर, आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में इनकी भागीदारी, विचार, जनमत, आदतों और संपूर्ण पारिवारिक जीवन में परिवर्तन करना होगा।

आलोचना

- मिल के विचार में आधुनिक पितृसत्तात्मक परिवार के अवशेष विद्यमान हैं।
- मिल स्त्री संबंधी 18वीं सदी की छवि तोड़ नहीं सके।
- मिल की दृष्टि केवल मध्यमवर्गीय स्त्रियों तक सीमित थी।

मिल का महत्व : मिल की मृत्यु के पश्चात मिल के ही विचारों को समाज एवं शासन ने मान्यता प्रदान की। इंग्लैण्ड में महिलाओं को मतदान का, निर्वाचित होने आदि का अधिकार मिला। डेविडसन के शब्दों में ''वर्तमान युग में जो सुविधाएँ महिलाओं को शिक्षा और समान अवसर के रूप में मिली हैं, जिसके बल पर स्त्रियों को व्यावहारिक प्रतिभा प्रदर्शित करने का अवसर मिला है, यह सब केवल एक व्यक्ति मिल के गम्भीर प्रयत्न एवं नेतृत्व का परिणाम है।'' वस्तुतः स्त्री-पुरुष समानता क संबंध में मिल के विचार अपने जमाने के विचारों से बहुत आगे थे। उन्होंने अन्याय के स्थान पर समानता के सिद्धान्त के आधार पर स्त्री-पुरुष संबंध के नियमन की बात की।

उदारवादी नारीवाद की आलोचना

- उदारवादी नारीवाद में वर्तमान परिवार व्यवस्था का पर्याप्त विरोध नहीं दिखाई देता। यह केवल औपचारिक समानता से संतुष्ट हो जाता है।
- यह सार्वजनिक, निजी भेद एवं उसके परिणाम पर विशेष ध्यान नहीं देता। जिल्लाह आइंसटिन का कहना है कि उदारवादी नारीवाद लैंगिक उत्पीड़न, श्रम का लैंगिक विभाजन एवं आर्थिक ढाँचे में आपसी रिश्तों का स्पष्टीकरण करने में असफल रही है।
- यहाँ यह कहा जाता है कि उदारवादी नारीवादी लैंगिक उत्पीड़न की जड़ों एवं संरचना को न तो पहचान पाये हैं और न ही उसका पर्याप्त तरीके से विश्लेषण कर पाये हैं। इनकी कर्मभूमि केवल श्वेत मध्यमवर्गीय महिलाओं तक सीमित रही है।
- लिंगीय समानता की स्थापना हेतु यह केवल मौजूदा संस्थाओं, कानूनों एवं परम्पराओं आदि में सुधार तक ही सीमित है। यहाँ इसे ढाँचागत समस्या नहीं माना गया है।

समाजवादी नारीवाद (Socialist Feminism)

समाजवादी नारीवाद समाजवाद की दार्शनिक मान्यताओं का अनुगमन करता है। समाजवादी नारीवाद नारी दमन को वर्ग समाज के साथ जोड़ते हैं। इनका मानना है कि समाज में वर्ग-विभाजन महिलाओं के उत्पीड़न एवं शोषण का कारण है। समाजवादी नारीवाद का यह मानना है कि वर्तमान समाज के ढाँचे में बिना संरचनात्मक परिवर्तन किए लैंगिक समानता स्थापित नहीं की जा सकती। इसके अनुसार पूँजीवाद और पितृसत्ता एक-दूसरे को मजबूती प्रदान करते हैं। अत: वे लैंगिक समानता की स्थापना के लिए पूँजीवाद की समाप्ति की बात करते हैं। उत्पादन और वितरण प्रणाली पर सर्वहारा वर्ग के नियंत्रण तथा अन्त में वर्गहीन समाज की स्थापना से इस आदर्श की प्राप्ति की जा सकती है। इनकी मुख्य बातें निम्नलिखित हैं-

1. लैंगिक असमानता के लिए पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था, वर्गीय संरचना के साथ-साथ पितृसत्तात्मक व्यवस्था भी उत्तरदायी है। समाजवादी नारीवादियों का यह मानना है कि पूँजीवाद एवं पितृसत्ता एक-दूसरे को मजबूती प्रदान करते हैं। यद्यपि पुरुष वर्चस्व के रूप में पितृसत्ता पूँजीवाद के पहले से ही विद्यमान है परन्तु वह पूँजीवाद के संचालन में मददगार साबित होती है। वह पूँजीवाद द्वारा न केवल समर्थन पाती है अपितु सुदृढ़ भी होती है। अत: लैंगिक समानता हेतु पूँजीवादी व्यवस्था का अंत आवश्यक है।
2. सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र का भेद असमानता को बढ़ावा देता है। समाजवादी नारीवाद इस विभाजन को समाप्त कर निजी कार्यों के मूल्य एवं महत्व की बात करते हैं जो सामाजिक दायरों में लागू होते हैं। पूँजीवाद गृहणी के घरेलू कार्यों को अनुत्पादक मानता है और बाहरी कार्यों को उत्पादक, चूँकि महिलाएँ सार्वजनिक उत्पादन प्रक्रिया से अलग निजी घरेलू कार्यों तक सीमित रहती हैं, इससे उनके शोषण को बढ़ावा मिलता है। यहाँ समाजवादी नारीवाद का कहना है कि पूँजीवाद जिस प्रकार अतिरिक्त मूल्य के दोहन के जरिए मजदूरों का शोषण करता है उसी प्रकार पुरुष महिलाओं के घरेलू श्रम का कुछ भी मुआवजा दिए बिना इससे लाभान्वित होता रहता है।

इसलिए एगेंल्स का कहना है कि नारीमुक्ति तब तक संभव नहीं हो सकती जब तक महिलाएँ घरेलू कार्य छोड़कर घर के बाहर मजदूरी वाले काम स्वीकार नहीं करती। इस प्रकार समाजवादी नारीवाद का यह मानना है कि पूँजीवादी शासन प्रणाली एवं पुरुष वर्चस्व शोषण को बढ़ावा देता है।

यहाँ समाजवादी नारीवाद का मानना है कि केवल समाजवादी समाज में ही स्त्री-पुरुष समानता हो सकती है क्योंकि-

- औरत एवं सर्वहारा दोनों दलित हैं। अत: पूँजीवाद की समाप्ति के साथ ही दोनों समान अधिकार प्राप्त कर लेंगे।
- समाजवादी समाज की स्थापना होने पर स्त्री-पुरुष का वर्ग भेद नहीं होगा बल्कि दोनों समानता के स्तर पर उत्पादन करेंगे। यहाँ स्त्री-पुरुष का केवल एक वर्ग होगा - वह श्रमिक वर्ग होगा।
- उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व के समाजीकरण के साथ ही स्त्रियोचित कार्यों का भी समाजीकरण हो जाएगा, कोई उत्पीड़क शेष नहीं रह पाएगा।
- समाजवादी समाज में सबकी समानता की बात होती है। यहाँ किसी को श्रेष्ठ या निम्न नहीं माना जाता है। यहाँ इस संदर्भ में मार्क्स एवं एंगेल्स का यह विचार था कि स्त्री मुक्ति की दिशा में पहला कदम यह होना चाहिए कि-
- स्त्री मजदूरों की वर्ग चेतना को उन्नत किया जाए।
- सामाजिक-राजनीतिक जीवन में उनकी भागीदारी लगातार बढ़ाई जाए।
- उन्हें मजदूरों के संघर्षों एवं आंदोलनों में शामिल किया जाए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि समाजवादी नारीवाद यह मानता है कि स्त्री समुदाय की मुक्ति में पहला कदम पूँजीवादी व्यवस्था का खात्मा है।

आलोचना :

- समाजवादी नारीवाद में लिंगीय असमानता को केवल वर्गपरक एवं आर्थिक व्याख्या के आधार पर बताने का प्रयास किया गया है जो कि एकांगी है।
- समाजवादी नारीवाद उदारवादियों की इस मान्यता का कि लिंग असमानता समाजीकरण की उपज है, से इन्कार कर सारा दोष पूँजीवादी व्यवस्था पर आरोपित कर देते हैं। परन्तु लिंगीय असमानता को बढ़ावा देने में समाजीकरण की भावना को उपेक्षित नहीं किया जा सकता।

उग्र नारीवाद *(Radical Feminism)*

इसकी उत्पत्ति संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन में उदार नारीवाद के खिलाफ प्रतिक्रिया के रूप में उभरकर सामने आया। इसके प्रमुख समर्थकों में सीमोन द बुआ, केट मिलेट, शुलामिथ फायरस्टोन आदि हैं। उग्र नारीवाद की शुरुआत प्रधानतः 1970 से हुई है। इसका उद्देश्य है लिंगों के बीच व्याप्त तमाम विभेदों को उद्घाटित किया जाए और उनके उद्घाटन के माध्यम से महिलाओं में जागृति लाकर उनकी स्वतंत्र पहचान को स्थापित किया जाए।

सीमोन द बुआ स्त्रियों के विरुद्ध होने वाले अन्यायों एवं अत्याचारों का विश्लेषण करती हुई कहती हैं कि- पुरुषों ने स्वयं को विशुद्ध चित्त (Being-for-itself) अर्थात् स्वयं में सत् के रूप में परिभाषित किया है तथा स्त्रियों की स्थिति का अवमूल्यन करते हुए उन्हें 'अन्य' (Being-for-others) के रूप में परिभाषित किया है। इस प्रकार स्त्रियों को 'वस्तु' के रूप में निरूपित किया गया है।

सीमोन द बुआ का कहना है कि- "औरत पैदा नहीं होती, बल्कि बना दी जाती है।" अर्थात् स्त्री सुलभ गुण-दोष या व्यक्तित्व लिंग भेद के प्राकृतिक आधार पर नहीं है। प्राकृतिक तौर पर उनमें वैसे गुण या दोष नहीं पाये जाते, बल्कि क्रमिक संस्कार, शिक्षा एवं पालन-पोषण के आधार पर ऐसे गुण उन पर आरोपित कर दिये जाते हैं।

यद्यपि विभिन्न उग्र नारीवादियों में मतैक्य का अभाव रहा है फिर भी इनकी कुछ निम्न बातें महत्वपूर्ण हैं-

- नारी की व्यक्तिगत पहचान को बढ़ावा।
- लिंग भेद को बढ़ाने वाले भाषा एवं संस्कृति को वर्तमान रूप से बाहर निकाला जाए। मानव स्वरूप का पुनर्मूल्यांकन किया जाए।
- परंपरागत मूल्यों को बदला जाए।

उग्र नारीवादियों का यह मानना है कि महिलाओं के शोषण में जैविक कारण हैं न कि राजनैतिक नागरिक अधिकारों का अभाव, जैसा कि उदारवादी नारीवादी मानते हैं। पुनः यह वर्गीय संरचना या पूँजीवाद का भी दुष्परिणाम नहीं है जैसा समाजवादी मानते हैं। इनके अनुसार लैंगिक विषमता की जड़े जैविक रूप से पूर्व निर्धारित हैं। ये महिलाओं की यौनिकता और उनकी प्रजनन क्षमता को महिलाओं के उत्पीड़न के जड़ के रूप में स्वीकार करते हैं। वे यह मानते हैं कि महिलाओं के शोषण के मूल में पितृसत्तात्मक व्यवस्था है। जेंडर पर आधारित विभाजन प्रकृति द्वारा नहीं बल्कि पितृसत्तात्मक समाज द्वारा बनाया गया है और वही इसे जारी रखे हुए हैं। पितृसत्ता के कारण ही महिलाओं ने भी 'नारी गुणों' के अवमूल्यन की बात स्वीकार की है। उग्र नारीवादियों की यह माँग है कि-

- पितृसत्तात्मक ढाँचे का उन्मूलन किया जाए।
- एक पूर्ण यौन क्रांति हो जो परम्परागत यौन पहचान को नष्ट कर दे।
- महिलाओं का अपने उत्थान हेतु पुरुषों का अनुसरण करना आवश्यक नहीं है। अतः यह पुरुष संस्कृति के मूल्यों को चुनौती देता है।
- महिला समलैंगिकता को बढ़ावा एवं मान्यता मिलनी चाहिए, क्योंकि यह विषम लैंगिक संबंधों को महिला शोषण का आधार मानती है। इसमें जबरन थोपे गये मातृत्व एवं यौन गुलामी की भावना होती है।
- यह अलगाववाद एवं पार्थक्यवाद को बढ़ावा देता है ताकि महिला स्वतंत्र रहे। समाज उस पर कुछ भी आपत्ति न करे, क्योंकि इनका मानना है कि विवाह शोषण एवं परतंत्रता की शुरुआत है। यह यौन गुलामी का एक तरीका है।
- महिलाओं से यौन सुचिता की अपेक्षा न की जाए।
- नारीवादी कुछ गुणों को श्रेष्ठ और पुरुष से संबंधित कर एवं कुछ गुणों को नारियों से जोड़कर उनके अवमूल्यन के प्रयासों का विरोध करते हैं।
- दीर्घकालीक तौर पर उग्र नारीवाद 'महिला संस्कृति' का निर्माण करना चाहता है जो उग्र मूल्यों के अनुरूप हो।

आलोचना

- उग्र नारीवाद में वैचारिक एकता का अभाव है। अति-विविध सोच के लिए यह कुख्यात है। परिणामस्वरूप इस धारा की वैचारिक समझ को परिभाषित करना कठिन है।

- उग्र नारीवाद यौनिकता एवं प्रजनन क्षमता पर जोर देकर महिलाओं को पितृसत्तात्मक सत्ता के परिभाषा के नजदीक ला देता है। जिसमें महिलाओं को मुख्यत: प्रजनन एवं भोग की वस्तु के रूप में देखा जाता है।
- यद्यपि उग्र नारीवाद पुरुष संस्कृति के मिथ्या दावों की पोल खोलता है किन्तु नारी मुक्ति का कोई यथार्थ निश्चित मार्ग बताने में असफल रहा है।
- पुरुष से महिला मुक्ति, स्वतंत्रता के आह्वान के रूप में उग्र नारीवादियों के प्रयास के कारण नारी में उन्मुक्तता एवं स्वच्छन्दता का भी विकास हुआ जिसके सामाजिक दुष्परिणाम भी दिखाई दे रहे हैं।
- उग्र-नारीवाद की कार्यशैली में बेसब्री, उतावलेपन के साथ-साथ ललकारने की प्रवृत्ति भी थी। परिणामस्वरूप इस उग्र अव्यवस्थित कार्यशैली ने इनकी लोकप्रियता को कम किया।

लिंग समानता की स्थापना हेतु क्या किया जाना चाहिए?

- महिलाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण (पुरुषों की सोच) को बदलने का प्रयास किया जाना चाहिए।
- स्त्री की व्यक्ति के रूप में पहचान स्थापित की जाए।
- समाज में होने वाले मूलभूत परिवर्तन से महिलाओं को जोड़ा जाए।
- सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक क्षेत्रों में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाई जाए।
- महिला जागरूकता को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- संचार माध्यम इत्यादि के द्वारा महिला अधिकारों एवं इससे संबंधित पक्षों का प्रसारण किया जाना चाहिए।
- राजनीतिक क्षेत्र में महिला आरक्षण की बात को लागू किया जाए।
- आर्थिक रूप से उन्हें स्वावलंबी बनाया जाए।
- महिलाओं को शक्ति एवं साधन संपन्न बनाया जाए।
- महिला उत्थान हेतु NGO's की मदद ली जाए।

निष्कर्ष

नारी आन्दोलन ने पुरुष से मुक्ति, पृथकता एवं स्वतंत्रता की बात की और अब पुरुष से समानता करते हुए यह आंदोलन महिला सशक्तिकरण तक पहुँच चुका है। अब नारियों की मुक्ति नहीं, सहानुभूति नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक अधिकारों को देने की वकालत की जा रही है जिसको पाने के लिए नारीवादी आंदोलन प्रयासरत् है। नारी सशक्तिकरण के संदर्भ में नारियों को शक्ति, साधन एवं अवसर उपलब्ध कराकर उनके आत्म-गौरव एवं आत्म-सम्मान को स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है।

महिला सशक्तिकरण (Women Empowerment)

क्या है :

महिला सशक्तिकरण का आशय है- नारियों को शक्ति, साधन एवं अवसर की समानता उपलब्ध कराकर उनके आत्मगौरव एवं आत्म सम्मान को स्थापित करने का प्रयास। इस रूप में सशक्तिकरण का आशय सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संदर्भों में महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक बदलाव या उत्थान से है। इसके अंतर्गत महिलाओं की मूलभूत आवश्यकताओं की प्राप्ति, आर्थिक सुरक्षा उनके क्षमताओं का विकास, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी सहभागिता और उनके सम्माननीय जीवनयापन को स्वीकार किया जाता है।

वस्तुत: महिला सशक्तिकरण सामाजिक रूपांतरण से संबंधित है जिसमें मानव अधिकारों को साकारित करने का भाव निहित होता है। महिला सशक्तिकरण एक रूप में साधन है तो दूसरे रूप में साध्य भी।

साधन रूप में : सामाजिक-राजनीतिक दर्शन का एक महत्वपूर्ण मूल्य समानता है। इस आदर्श की प्राप्ति हेतु लिंग समानता का होना आवश्यक है। लिंग समानता की स्थापना तभी संभव हो सकती है जब महिलाओं का सशक्तिकरण हो तथा समाज में 'मनुष्य' के रूप में इनकी पहचान सुनिश्चित हो।

साध्य रूप में : वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण सामाजिक-राजनीतिक संदर्भों में एक साध्य के रूप में देखा जा रहा है और इसकी प्राप्ति के लिए प्रयास भी किए जा रहे हैं जैसे- ग्राम पंचायतों में महिलाओं के लिये विशेष प्रावधान।

महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया की दो रूपों में देखा जा सकता है:-

1. वाह्य रूप से किया गया
2. पारिवारिक सामाजिक / संरचना के ढांचे के अंदर से किया गया प्रयास

ऊपर से या बाह्य रूप से सशक्तिकरण का आशय सरकार के प्रयासों व महिलाओं संबंधी विभिन्न कानूनों से है। ऐसे प्रयासों से महिलाओं की उन्नति के अवरोधक तत्व हटने लगते हैं।

परंतु केवल कानून बनाने मात्र से वास्तविक लक्ष्य की प्राप्ति नहीं की जा सकती। इसके लिए भीतर से, ढांचागत स्तर पर, व्यक्तिगत स्तर पर प्रयास करना होगा। इस प्रयास में पुरूषों व महिलाओं दोनों का सहयोग आवश्यक है। पुरूषों की महिलाओं के प्रति अपना दृष्टिकोण परिवर्तित करना होगा। पुरूष वर्चस्व की मानसिकता को हटाना होगा। दूसरी ओर स्त्रियों को भी अपने हीनभाव को त्याग कर अपने आत्मसम्मान व आत्मगौरव की स्थापना करने के लिए आगे बढ़कर उन अधिकारों के प्रति अपनी जागरूकता दिखानी होगी। इसके लिए महिलाओं का शिक्षित होना अति आवश्यक है।

महिला सशक्तिकरण के विविध आयाम

सामाजिक क्षेत्र :

1. स्त्री-शिक्षा व स्वास्थ्य पर पर्याप्त ध्यान दिया जाए, क्योंकि बिना शिक्षा के जागरूकता एवं दृष्टिकोण में परिवर्तन संभव नहीं है।
2. अपने भविष्य के लिए पाठ्यक्रम एवं व्यवसाय चुनने का अधिकार हो।
3. परिवार एवं समाज के महत्वपूर्ण मसलों पर निर्णय लेने में महिलाओं की भागीदारी हो।
4. सामाजिक कुप्रथाओं एवं महिलाओं के प्रति हिंसा एवं दुर्व्यवहार को रोकने की समुचित व्यवस्था की जाए। इस सम्बन्ध में बाल विवाह, दहेज प्रथा, भ्रूण हत्या, दासी प्रथा आदि के सम्बन्ध में बने कानूनों का सख्ती से पालन किया जाय। महिलाओं के प्रति हिंसा व दुर्व्यवहार करने वालों के लिए त्वरित दंड की व्यवस्था की जाए।
5. घरेलू कार्यों से बाहर सामाजिक गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ायी जाए।

आर्थिक आयाम

इसका आशय आर्थिक गतिविधि के विभिन्न क्षेत्रों में इनकी भागीदारी को बढ़ाकर, अधिकार देकर इन्हें सशक्त करना है। इसके अंतर्गत उत्पादक गतिविधियों में इनकी भागीदारी, भूमि व सम्पत्ति में अधिकार, बचत व ऋण तक इनकी पहुंच व्यावसायिक शिक्षा, इनकी आय पर कम टैक्स आदि के माध्यम से ऐसे प्रयासों को गति दी जा सकती है।

राजनीतिक सशक्तिकरण

विभिन्न राजनीतिक क्रियाकलापों व राजनीतिक संस्थानों में इनकी भागीदारी को बढ़ाकर व अधिकार देकर उनकी स्थिति में सुधार करना है। इस क्रम में महिला आरक्षण विधेयक एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है। इसी संदर्भ में ग्राम पंचायत के स्तर पर महिलाओं की भूमिका को प्रभावी बनाया गया है। पुन: महिला सम्बधी कानूनों के निर्माण में उनकी भूमिका प्रधान हो।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक सशक्तिकरण

विभिन्न धर्मों के स्तर पर महिलाओं के प्रति विद्यमान विषमता के भाव को समाप्त करने का प्रयास किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में किया गया संशोधन एक महत्वपूर्ण कदम है।

बाधक तत्व

1. महिलाओं में अधिकारों के प्रति जागरूकता कम
2. अशिक्षा
3. घरेलू कार्यों में अधिक व्यस्तता।
4. आर्थिक रूप से पर निर्भरता का भाव, संसाधनों तक सीधी पहुंच नहीं।
5. पति या सास-ससुर की प्रवृत्तियाँ
6. घरेलू हिंसा और दुर्व्यवहार

सशक्तिकरण हेतु प्रयास

1. सोच या दृष्टिकोण में परिवर्तन होना चाहिए। यह परिवर्तन दोनों स्तर पर होना चाहिए। पुरूषों द्वारा महिला को दासी / वस्तु न मानकर मित्र या सहयोगी की भावना को स्वीकार करना चाहिए व महिलाओं द्वारा हीनता का भाव त्याग कर आत्मसम्मान व आत्मगौरव की रक्षा हेतु स्व-प्रयास करना चाहिए।
2. बाह्य एवं आंतरिक दोनों स्तरों पर परिवर्तन स्तरों पर महिलाओं की भागीदारी, सक्रियता, आत्म-गौरव व आत्म-सम्मान में सकारात्मक परिवर्तन होना चाहिए।
3. महिलाओं की 'व्यक्ति' के रूप में पहचान स्थापित की जाय।
4. समाज में घटित मूलभूत परिवर्तनों से महिलाओं को जोड़ा जाय।
5. विकास कार्यों एवं निर्णय प्रक्रिया में इनकी सहभागिता बढ़ायी जाय।
6. संचार माध्यमों, स्वैच्छिक संगठनों (NGOs) इत्यादि की सहायता से महिला जागरूकता को बढ़ाया जाय।
7. राजनीतिक क्षेत्र में महिला आरक्षण विधेयक को साकारित किया जाय।
8. महिलाओं की शिक्षा पर विशेष काम दिया जाए। जब पुरूष शिक्षित होता है तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है और जब एक स्त्री शिक्षित होती है तो एक पूरा परिवार शिक्षित होता है, क्योंकि एक शिक्षित महिला अपने समस्त परिवार की शिक्षा व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

उद्धार एवं सहानुभूति बनाम अधिकार एवं आत्मगौरव

वर्तमान समय में नारीवादी आंदोलन स्वयं नारियों के द्वारा नारियों के हित में चलाया जा रहा है इसमें-

1. उद्धार के स्थान पर अधिकारों पर बल दिया जा रहा है।
2. दया व सहानुभूति के स्थान पर आत्म सम्मान व आत्मगौरव की बात की जा रही है।

आधुनिक नारीवादी विचारकों का यह मानना है कि पुरूषों द्वारा व्यक्त नारीवादी विचार या उनके द्वारा किया गया कार्य नारियों के उद्धार व सहानुभूति की भावना से युक्त है जो नारियों के अधिकार बोध व आत्मसम्मान को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। पुरूष न तो कभी नारियों को वास्तविक अधिकार प्रदान कर सकता है और न ही उनकी भावना को समझ सकता है। पुरूष अधिकार इसलिए नहीं प्रदान कर सकते, क्योंकि इससे उनका वर्चस्व टूटेगा। अत: नारीवादियों का यह कहना है कि नारियों को स्वयं आगे बढ़कर अपने अधिकार लेने होंगे। पुरूष उसे स्वेच्छा से अधिकार नहीं देगा। इस रूप में नारीवादी उद्धार की बजाय अधिकार एवं सहानुभूति की बजाय आत्मगौरव व आत्मसम्मान की प्रतिष्ठा की बात करते हैं।